''सत्य और अहिंसा की अवधारणा'' में ''गाँधी जी का वैचारिक अवदान''

अभय कुमार
शोध छात्र
दर्शन विभाग
डॉ. हरीसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
सागर (म.प्र.) 470003
मो. 9131373073
ईमेल– abhayipr@gmail.com

शोध निर्देशक
प्रो. अखिलेश्वर प्रसाद दुबे
दर्शन विभाग
डॉ. हरीसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
सागर (म.प्र.) 470003

वाणी सत्य से ही प्रतिष्ठित होती है यह सब सत्य में प्रतिष्ठित है। इसलिए विद्वान सत्य को ही सबसे ऊँचा बताते हैं। सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं और झूठ से बढ़कर कोई पाप नहीं। वस्तुतः सत्य ही धर्म का मूल है।

प्रकृति के नियमों में ही सत्य का प्रकाश होता है। सब सद्गुण सत्य के और सब अवगुण असत्य के रूप हैं। भीष्म ने महाभारत में इसका वर्णन इस प्रकार किया है। ''सत्यपरायणता, न्यायवर्तिता, आत्मसंयम, आडम्बरहीनता, क्षमा, नम्रता, सहिष्णुता, अनसूया दाक्षिण्य, परोपकार, आत्मजय, दया और अहिंसा ये तेरहों सत्य के रूप हैं।''

किसी वस्तु का होना सत्य और न होना असत्य है। भीष्म ने कहा ''सत्य सनातन ब्रह्म, सब कुछ सत्य में प्रतिष्ठित है।''

सर विलियम जोन्स का मत है कि मनुस्मृति का रचनाकाल यदि 1280 ई. पूर्व नहीं तो 1580 ई. पूर्व अवश्य है। मनु ने धर्म के जो 10 लक्षण बताये हैं उनमें कई ऐसे हैं जो मन की साधना और उच्चतम सत्य की प्राप्ति के लिए अति आवश्यक है।

''धैर्य–क्षमा–आत्मसंयम–चोरी न करना–बुद्धि–इन्द्रिय–निग्रह–शुद्धिज्ञान–सत्य और अक्रोध धर्म के लक्षण (साधन) हैं'' एक और स्थान पर उनकी संक्षेप में चर्चा इस प्रकार की गई है।

''अहिंसा, सत्य अस्तेय, शुद्धि और इन्द्रिय निग्रह इन कार्यों का मनु ने चारों वर्गों के लिए विधान किया है। जो लोग वाणी द्वारा बेईमानी करते हैं। उनकी निन्दा

मनु ने इस प्रकार की है– समस्त कार्य वाणी द्वारा नियंत्रित होते हैं, वाणी उनका मूल है, वाणी से उनकी उत्पत्ति होती है और जो मनुष्य वाणी से ईमानदार नहीं वह सभी कार्यों में बेईमान होता है।

सत्य के सम्बन्ध में बौद्ध धर्म में वाणी के पापों का उल्लेख है जो चार प्रकार से है– (1) झूठ बोलना (2) परनिन्दा करना (3) गाली देना (4) निष्प्रयोजन बकवाद करना।

सिक्ख धर्म में भी– 'सच और झूठ की टक्कर ऐसी है जैसी कि पत्थर और मिट्टी के बर्तन की।

पत्थर मिट्टी के बर्तन पर गिरेगा तो बर्तन टूट जायेगा। दोनों हालतों में नुकसान मिट्टी के बर्तन का ही होगा।

यहाँ पर संत कबीर की पंक्तियाँ –

सांच बरोबर तप नहीं झूठ बरोबर पाप।
जाके हिरदे सांच है ताके हिरदे आप।।

सत्य का मूल– गांधी के अनुसार

गांधी का मानना है कि जो हमारी आत्मा कहे वही सत्य है लेकिन प्रश्न पैदा होता है कि सभी व्यक्तियों की अन्तरात्मा की आवाज सत्य हो सकती है? गांधी जी इस प्रश्न के उत्तर में कहते हैं कि विभिन्न परिस्थितियों में रहते हुए लोगों की अन्तरात्मा की आवाज एक–दूसरे से भिन्न हो पर वह सत्य है– चरम सत्य नहीं। इस प्रकार एक सत्य दूसरे के लिए असत्य हो सकता है। यदि चरम एवं ईश्वरीय सत्य का ज्ञान प्राप्त करना है तो व्यक्ति को सत्य का प्रयोग करना होगा।

गांधी जी ने कहा, सत्य केवल शब्दों की सत्यता ही नहीं बल्कि विचारों की सत्यता भी है और हमारी अवधारणा का सापेक्षिक सत्य ही नहीं है बल्कि निरपेक्ष सत्य भी है, जो ईश्वर ही है। गांधी जी सत्य को निरपेक्ष सत्य के रूप में ग्रहण करते हैं। सत्य को ईश्वर का पर्यायवाची मानते हैं, इसी सत्य के प्रति निष्ठा है। हमारे अस्तित्व का एकमात्र औचित्य हमारी समस्त गतिविधि सत्य पर केन्द्रित होनी चाहिए। सत्य ही हमारे जीवन का प्राण तत्व होना चाहिए। क्योंकि सत्य के बिना

व्यक्ति अपने जीवन के वास्तविक लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता, यह जरूर हो सकता है कि उसे सफलता मिल जाये लेकिन आन्तरिक शान्ति प्राप्त नहीं होगी।

गांधी जी ने कहा, मैं सत्य का एक विनम्र शोधक हूँ। इसी जन्म में मैं आत्म साक्षात्कार के लिए, मोक्ष प्राप्त करने के लिए आतुर हूँ। करोड़ों गूंगी जनता के हृदय में बसे ईश्वर के सिवाय मैं और किसी ईश्वर को नहीं जानता। लोग अपने अन्दर ईश्वर को पहचानते नहीं। मैं पहचानता हूँ। इन लाखों करोड़ों लोगों की सेवा के द्वारा मैं सत्य रूपी परमेश्वर की पूजा करता हूँ।

सत्य एक हित

गांधी जी सत्य को ईश्वर और ईश्वर को सत्य के रूप में मानते हैं। सत्य हमेशा हितकर और आनन्दयुक्त है। इसमें शोक या अहित के लिए कोई स्थान नहीं है। सत्य से चित् और आनन्द का अनिवार्य संबंध है। चित् का आशय ज्ञान है। इसलिए सत्य का सुख–आनन्द भी शाश्वत होता है।

सत्य की परिधि

सत्य का क्षेत्र केवल सत्य बोलने तक ही सीमित नहीं है। गांधी जी ने सत्य के क्षेत्र का विस्तार किया। वे वाणी के सत्य को ही सत्य नहीं मानते, अपितु उनके सत्य के विचार और आचार का सत्य भी सम्मिलित है। गांधी जी ने कहा पृथ्वी सत्य के बल पर टिकी हुई असत् असत्य के माने है– ''नहीं'' – सत्–सत्य जहाँ आसत् अथवा अस्तित्व ही नहीं है और जो सत् अर्थात् है। उसका नाश कौन कर सकता है। बस इसी में सत्याग्रह का समस्त शास्त्र समाविष्ट है।

सत्य स्वभाव से ही प्रकाशमय है जैसे ही अविद्यारूपी आवरण हट जायेगा वैसे ही सत्य रूपी सूर्य प्रकाशित हो उठेगा। इसलिए सत्यान्वेषण के लिए आत्म–विश्लेषण और आत्मशुद्धि आवश्यक है।

गांधी जी का विचार था कि सत्य निष्ठा पर अडिग रहने के लिए आपेक्षित शक्ति उन्हें अपनी नैतिक शुद्धता तथा काम–क्रोध आदि भयंकर शत्रुओं को अपने से दूर रखने से मिली। इससे दृष्टि और निर्णय दूषित नहीं हो सके। यही कारण था कि वे अन्य राजनीतिज्ञों की अपेक्षा अपनी समस्याओं के आधारभूत सत्य को उन्होंने अच्छी तरह देखा और समझा। इसके साथ–साथ अपनी खामियों–भूलों को भी

महसूस करते थे और निःसंकोच रूप से अपनी प्रतिष्ठा की परवाह नहीं करते हुए सार्वजनिक रूप से स्वीकार कर लेते थे।

मनुस्मृति में कहा गया है– ''सत्य बोलना भी एक बड़ी कला है जो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नित्य एवं अविराम साधना से ही संभव है जो व्यक्ति अपनी वाणी पर संयम नहीं रख सकता वह सत्यव्रत का पालन नहीं कर सकता। गांधी जी ने कहा– अनुभव ने मुझे सिखाया है कि सत्य के पुजारी के लिए मौन उसके आध्यात्मिक अनुशासन का एक अंग है जाने–अनजाने बढ़ा–चढ़ाकर कहने की सत्य को दबा देने की या कम–ज्यादा कर देने की वृत्ति मनुष्य की स्वाभाविक कमजोरी है और मौन इस पर विजय पाने के लिए जरूरी है।

सत्य का परिवेश व्यापक – गांधी के अनुसार

गांधी जी ने कहा कि सत्य का परिवेश बहुत व्यापक है, उसमें केवल व्यक्ति ही नहीं बल्कि समस्त समाज और राष्ट्र का भी समावेश है। सम्पूर्ण सत्य (मन, वचन, कर्म का सत्य) का पालन धर्म, राजनीति, अर्थनीति, परिवार सबमें होना चाहिए, व्यक्ति और समाज का कोई पक्ष सत्य से विरक्त न हो। राजनीति में असत्य को आधार माना जाता है लेकिन गांधी जी ने अपने आचरण से सिद्ध कर दिया कि राजनीति में सत्य का पालन पूर्णतः संभव है।

गांधी जी विश्वबंधु संभवतः इसलिए हुए कि उन्होंने सत्य के वैयक्तिक जीवन दर्शन को सामाजिक जीवन व दर्शन में परिणित किया और किसी सीमा तक अपने जैसे व्यक्तित्व की पौध खड़ी कर दी।

गांधी जी का मानना है कि सच्ची विजय सत्य की ही होती है। पर सत्य की विजय सरलता से और आप ही आप देखने में आ जाये तो सत्य की जो कीमत आज है वह न रहे।

सत्य ही ईश्वर है

गांधी जी ने माना सत्य ही परमात्मा है। वह हमेशा मौजूद है और हरेक जीव में काम कर रहा है। सत्य और ईश्वर पर्यायवाची शब्दों के रूप में भी व्यक्त किये जा सकते हैं। सत्य शब्द का प्रचलित अर्थ ईश्वर नहीं, गांधी जी ने अनेक स्थलों पर कहा कि संसार अपरिवर्तनीय और अटल नियमों से संचालित है– ये नियम

सत्य हैं अतः यही कहा जा सकता है कि जो अपरिवर्तनीय है। वही सत्य है। गांधी जी ने अपनी आत्मकथा की प्रस्तावना में वेदांत की भाषा का प्रयोग करते हुए कहा कि ''वही एक सत्य है और दूसरा मिथ्या।'' उनका यह विश्वास दिनोदिन बढ़ता ही गया कि इस दुनिया में एक ही सत्य है। इसके अलावा और कुछ नहीं। इसलिए परमेश्वर सत्य है ऐसा कहने के बदले सत्य ही परमेश्वर है यह कहना ज्यादा सही है। प्रायः गांधी जी के लिए तो सत्य और परमेश्वर पर्यायवाची शब्द दिखते हैं। इसलिए ''ईश्वर के नाम पर कहना और शपथपूर्वक कहना।''

सभी को देखते हुए गांधी जी ने सत्य की व्यापक परिभाषा दी और ''ईश्वर को सत्य का पर्यायवाची मान लिया।'' ईश्वर ही सत्य है के सिद्धान्त में आस्था रखने वाले, गांधी जी ने सत्य ही ईश्वर है, के सिद्धान्त को मानना और उसका प्रचार–प्रसार किया जब देखा कि ईश्वर को नकारने वाले तो बहुत है। परन्तु सत्य को नकारने वाला पैदा नहीं हुआ। सत्य ही वास्तविकता का द्योतक है।

अहिंसा

गांधीजी ने अहिंसा को सत्य को चरितार्थ करने का साधन माना। उनके अनुसार निरंतर अहिंसा का पालन करने का मतलब अन्त में सत्य को प्राप्त करना है किन्तु हिंसा के साथ ऐसी कोई बात नहीं है। इसलिए अहिंसा में मेरी अधिक आस्था है, सत्य स्वाभाविक रूप से मिला लेकिन अहिंसा को मैंने एक संघर्ष के बाद पाया है। अहिंसा के माने हैं प्रेम, त्याग। अहिंसा मरने की कला सिखाती है मारने की नहीं, यही कारण है कि दुनिया की कोई भी शक्ति अहिंसा का मुकाबला नहीं कर सकती। गांधी जी ने देखा कि निजी जीवन में अहिंसा और बाहरी जीवन में हिंसा ये दो चीजें साथ–साथ नहीं चल सकती। इसलिए उन्होंने जीवन के हर क्षेत्र में अहिंसा का पालन का आग्रह किया।

उन्होंने कहा– ''हम लोगों के दिल में इस झूठी मान्यता ने घर कर लिया है कि अहिंसा व्यक्तिगत रूप से ही विकसित की जा सकती है और वह व्यक्ति तक ही सीमित है।''

वास्तव में ऐसी बात नहीं, अहिंसा सामाजिक धर्म है और वह सामाजिक, धर्म के रूप में विकसित की जा सकती है। सामान्य भाषा में हिंसा किसी प्राणी का प्राण

हरण या उसे किसी प्रकार का कष्ट देना ही है क्योंकि हमारा जीवन ही किसी न किसी रूप में हिंसा पर आधारित है। अहिंसा और सत्य के समन्वय से तुम संसार को झुका सकते हो, अहिंसा सर्वोच्च प्रकार की सक्रिय शक्ति है। यह आत्मबल या यों कहें यह हमारे अन्दर देवत्व का फल है। अपूर्ण मनुष्य उस समस्त सारतत्व को ग्रहण नहीं कर सकता, वह उसकी सम्पूर्ण जीत को तो क्या उसके सूक्ष्म को भी सहन नहीं कर सकता और जब यह जीत क्रियाशील हो जाती है तो आश्चर्यजनक काम करती है।

अहिंसा एक निषेधात्मक शब्द

शाब्दिक दृष्टि से अहिंसा एक नकारात्मक शब्द है। अ + हिंसा = अहिंसा, हिंसा नहीं। अर्थात् हिंसा को नकारना लेकिन जिस चीज को नकारा जा रहा है उसे समझना आवश्यक है। हिंसा 'न' धातु से उत्पन्न हुई है इस धातु का शाब्दिक अर्थ चोट पहुँचाना, हत्या करना, समाप्त करना आदि। इसी शब्द से हिंसा शब्द बना है जिसका शाब्दिक अर्थ है चोट पहुँचाने की या हत्या की इच्छा। हिंसा शब्द के आगे 'अ' प्रत्यय जोड़ देने पर अहिंसा शब्द बनता है। जिसका शाब्दिक अर्थ होगा चोट न पहुँचाना अथवा हत्या न करना इसलिए शाब्दिक अर्थ में अहिंसा एक नकारात्मक शब्द है।

अहिंसा धार्मिक संस्कारों के साथ जुड़ा शब्द

व्यावहारिक अर्थ में अहिंसा हमारे धार्मिक संस्कारों के साथ जुड़ी हुई है। पातंजलि योगसूत्र में अहिंसा को न केवल समुचित महत्व दिया गया है यहाँ पर पंचायत में अहिंसा को स्थान देते हुए इस बात पर जोर दिया गया है कि उसी से मनुष्य का आध्यात्मिक विकास संभव है। योगसूत्र में भी आधुनिक काल में अहिंसा ने एक नया रूप धारण कर लिया जो सतही पर स्थिर नहीं बल्कि वह व्यापक और विशाल हो गया है।

अहिंसा का अर्थ मोक्ष और मोक्ष सत्यानुभव को कहते हैं। यहाँ पर डर का कोई स्थान नहीं है। हिंसा इस संसार में निरंतर चलती ही रहेगी। गीता इससे बचकर निकलने का मार्ग बताती है। युद्ध में मार डालना या मारा जाना, डरकर जीने से कहीं अधिक अच्छा है। यथार्थ तो यह है कि जहाँ सत्य है वहीं अहिंसा है

वहीं सत्य है। गांधी जी ने कहा क्रोध अहिंसा का शत्रु है और अभिमान तो ऐसा राक्षस है कि वह उसे निगल ही जाता है। गांधी जी ने कहा कि मुझे तो अहिंसा के सिवाय कोई दूसरा कुछ दिखाई नहीं देता। मुझे विश्वास है कि अहिंसा की सदा जय होती है। जिस दिन यह प्रतीति हो जायेगी कि अहिंसा निष्फल है उस दिन मेरे लिए मृत्यु ही विराम स्थान होगा।

अहिंसा से शक्ति और आन्दोलन

वर्तमान समय में राष्ट्रों को यह पहचान हो गयी है कि अहिंसा के द्वारा किसी भी शक्ति और आन्दोलन को जीता जा सकता है। अहिंसा ईमारत की नींव की तरह कार्य करती है, अहिंसा ऐसा शस्त्र जिससे विश्वशांति स्थापित की जा सकती है। हिंसा और युद्धों के द्वारा यह महान कार्य कभी नहीं होगा। अहिंसा रूपी शस्त्र बौद्धिक नहीं यह श्रद्धा, प्रेम तथा विश्वास पर आधारित है। इसमें तर्क का कोई स्थान नहीं है। अहिंसा एक अमोघ हथियार है, जिस मनुष्य ने अहिंसा शक्ति को पूर्ण तथा साध्य कर लिया उसका मुकाबला दुनिया की कोई भी शक्ति नहीं कर सकती।

गांधी जी मानते हैं कि अहिंसा का मार्ग सहज था और उनके द्वारा आन्दोलन करना संभव था। गांधीवादी लेखक रमणमूर्ति का भी विचार है कि क्रान्तिकारियों व आतंकवादियों की असफलता और निराशा ने गांधी जी को भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अहिंसा को एक संघर्ष पद्धति के रूप में अपनाने के लिए प्रेरित किया। यदि बिना सत्य व अहिंसा के त्याग के हम उद्देश्य तक नहीं पहुँच सकते तो मैं असीम धैर्य के साथ प्रतीक्षा कर सकता हूँ।

वर्तमान की सबसे बड़ी समस्या यह है कि मानव जाति विघटित एवं विभाजित पड़ी है। भारत के शीर्षस्थ दार्शनिक डॉ. राधाकृष्णन् का भी यह कहना है कि आध्यात्मिक जीवन की पवित्रता एवं श्रेष्ठता, मानव जाति के बन्धुत्वबोध तथा शांति के प्रति प्रेम इन आदर्शों के आधार पर एक पूरी नई पीढ़ी को प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है। दूसरे शब्दों में इसका अर्थ सामाजिक कार्यों में अहिंसा का प्रयोग करना।

गांधी जी ने कहा हम भारत को अहिंसा अपनाने की सलाह इसलिए नहीं दे रहे कि वह कमजोर है बल्कि हम तो उसे यह सलाह इसलिए दे रहे कि वह अपनी शक्ति को जानकर ही अहिंसा पर अमल करे......मैं चाहता हूँ। कि भारत यह महसूस कर ले कि उसमें ऐसी आत्मा है जो कभी भी मर–मिट नहीं सकती। वह शारीरिक कमजोरी से ऊपर उठकर तमाम दुनिया की सारी शारीरिक ताकत को चुनौती दे सकती है और विजय प्राप्त कर सकती है।

अहिंसा के प्रयोग पर दार्शनिकों के विचार

भगवान महावीर ने अहिंसा की परिभाषा इस प्रकार दी है– ''प्राणी मात्र के प्रति संयम रखना ही अहिंसा है।'' गौतम बुद्ध ने अहिंसा की परिभाषा देते हुए बतलाया कि त्रस या स्थावर जीवों को न मारे, न मरावे, न मारने वाले का अनुमोदन करे।

गीता में श्रीकृष्ण की वाणी इस प्रकार प्रभावित हुई है– ज्ञानी पुरुष ईश्वर को सर्वत्र समान रूप से व्याप्त देखकर हिंसा की प्रवृत्ति नहीं करता, क्योंकि वह जानता है कि हिंसा करना खुद अपनी ही घात करने के बराबर है। और इस प्रकार हृदय के शुद्ध और पूर्ण रूप से विकसित होने पर उत्तम गति को प्राप्त करता है। गांधी जी ने कहा, अहिंसा सूक्ष्म जीवों से लेकर मनुष्य तक सभी जीवों के प्रति समभाव ही है।

सारांश यह है कि उक्त कथनों–विचारों में दया, करुणा का सागर उमड़ रहा है। प्रायः कथनाकारों ने बताया कि मनसा, वाचा, कर्मणा से प्राणी को कष्ट न पहुँचाना अहिंसा है। सूक्ष्म से लेकर स्थूल तक सभी जीवों के प्रति मैत्रीभाव रखना अहिंसा है। अहिंसा मानवता की आधारशिला है और मानवता का उज्ज्वल प्रतीक परिवार, समाज, देश और राष्ट्र में यदि शांति के संदर्शन हो सकते हैं तो एकमात्र अहिंसा से ही। हम कह सकते हैं कि अहिंसा विश्व की आत्म–प्राण है और चेतना का स्पन्दन। गांधी जी का मानना है कि अहिंसा अचूक है वह कभी नाकाम नहीं जाती। सच्ची अहिंसा की ताकत का एक अंश भी कभी जाया नहीं जा सकता।

अहिंसा की सफलता के लिए शर्तें

- अहिंसा परम श्रेष्ठ मानव धर्म है, पशुबल से यह अनंत गुना महान और उच्च है।

- जो व्यक्ति और राष्ट्र अहिंसा का अवलम्बन करना चाहे, उन्हें आत्मसम्मान को छोड़कर अपना सर्वस्व (राष्ट्र को तो एक–एक आदमी) गंवाने के लिए तैयार रहना चाहिए। इसलिए वह दूसरों के मुल्कों को हड़पने अर्थात् आधुनिक साम्राज्यवाद से, जो कि अपनी रक्षा के लिए शक्ति पर निर्भर रहता है, बिल्कुल मेल नहीं खा सकता।
- अहिंसा समाज, राष्ट्र एवं हर व्यक्ति के लिए परम आवश्यक है। यह समझना गलत है कि अहिंसा केवल व्यक्तियों के लिए ही आवश्यक है। वह धर्म की तरह है।

हिंसा और अहिंसा में भेद,

हिंसा सदा अशांति, अभाव, बुराई, कलह और विग्रह के आश्रय में रहती है जब अहिंसा स्वयं एक शांति है, समृद्धि है उसमें समता है स्वावलम्बन, प्रेम, दया और आत्मानुभूति का सुख, हिंसा मानसिक रोग है जबकि अहिंसा ऐसा स्वास्थ्य है जिसमें आदमी अधिभौतिक आध्यात्मिक उन्नति को प्राप्त कर आत्मानंद परमानंद का अधिकारी बन जाता है।

गांधी जी ने कहा कि हिंसा का मार्ग अहिंसा के मार्ग की अपेक्षा कोई बहुत बड़ा आश्वासन नहीं दिलाता है जिसकी कोई सीमा नहीं। कारण यह है कि उसमें अहिंसा के पुजारी की श्रद्धा का अभाव होता है।

अहिंसा का स्वरूप

अहिंसा का मूल आधार प्रेम है उन्होंने माना कि जो हमें प्रेम करता है। उससे भी हम प्रेम करें, यह अहिंसा नहीं। अहिंसा तो तब है जब अपने विरोधी शत्रु या अपने से विद्वेष रखने वाले को भी प्रेम करे। गांधी जी के मन में जिनके प्रति असहयोग किया जाता था उनके प्रति घृणा नहीं बल्कि प्रेम ही था। यह अहिंसा की भावात्मक व्याख्या है। जिसमें भगवान बुद्ध की मैत्री और करुणा, महावीर की मैत्री, करुणा, प्रमोद एवं मध्यस्थ और हिन्दू धर्म की जीव दया या भूत दया की भावनाएँ हैं। ईसा भी कहते हैं दुश्मनों से प्यार करो।

अहिंसा के लक्ष्य एवं सकारात्मक पक्ष

गांधी के दर्शन में अहिंसा के तीन लक्ष्य दिखायी देते हैं।

(1) **सत्य की उपलब्धि**– अहिंसक व्यक्ति ही सत्य के दर्शन कर सकता है। हिंसा से सत्य दूर रहता है हिंसा और सत्य कभी मिलकर नहीं बैठ सकते।

(2) **प्राणीमात्र का हित साधना**– अहिंसा पालन के बिना कोई व्यक्ति प्राणी हित की बात अपने विचार में नहीं ला सकता। अहिंसा प्राणी अलग–अलग नहीं है।

(3) **समाज का पुनः निर्माण**– अहिंसा के बिना समाज का पुनः निर्माण संभव नहीं। उनका मूल आधार अहिंसा है। समाज व्यवहार रूप में अहिंसा से ही चलता है।

अहिंसा सभी प्रकार की दुर्भावनाओं तथा उन पर आधारित दुर्व्यसनों के स्थान पर स्नेह, विनम्रता, प्रेम, दया, करुणा, न्याय तथा निर्भयता जैसे सद्‌भावों में झलकती है। गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञ का–सा आचरण होता है न वह किसी की बुरा चाहता है, न किसी के लिए बुरे वचन बोलता है उसका आचरण बुरा अथवा अभद्र होता ही। अहिंसा से विरोधी को मित्र बनाया जा सकता है।

अहिंसा आत्मबल और निर्भयता के बिना चल नहीं सकती क्योंकि इसमें प्रतिहिंसा की भावना नहीं अपितु क्षमा की भावना रहती है।

आधुनिक भारत और अहिंसा

गांधी जी ने अहिंसा रूपी अस्त्र का प्रयोग एवं उसकी पालना कठोर से कठोर परिस्थिति में किया उस दृष्टि से अहिंसा शांति का आमेघ अस्त्र है यह तथ्य हजारों वर्ष पहले ही अनुभव कर लिया गया था। जो साधना के क्षेत्र में बढ़ते हैं उन्हें अहिंसा का सूक्ष्म, सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम पालन करना पड़ता है। वह केवल व्यक्ति ही नहीं अपितु सारा संसार शांति आश्वासन प्राप्त करता है।

आज अहिंसा की बात अधिक होती है पर उस पर अमल कम हो रहा है। शस्त्रों की भरमार होती जा रही है जिससे यह अनुभव हो रहा है कि अहिंसा औपचारिक आधार पर ही इसकी उपयोगिता रह गयी है।

आलोचना एवं निष्कर्ष

गांधी जी जीवन में किसी को शत्रु नहीं माना शायद इसी गुण के कारण महात्मा कहलाये। उनका यह मानना था कि जैसा वे एक मित्र से करता वैसा ही

शत्रु से भी प्रेम करना चाहिए। समालोचकों का दावा है कि एक वैयक्तिक गुण के रूप में अहिंसा कितनी ही आदर्श और अनुकरणीय क्यों न हो, स्थायी प्रयोग के लिए राजनैतिक साधन के रूप में यह एक क्षण के लिए भी कसौटी पर खरी नहीं उतरती।

गांधी जी ने जीवन भर सत्य और अहिंसा को अपने मूल मंत्र के रूप में विकसित एवं पूर्णतः से उसको जीवन में उतारा।

गांधी जी ने आत्मा की आवाज को सत्य कहा लेकिन सत्य को ईश्वर के साथ जोड़ा और कहा सत्य ही ईश्वर है। गांधी जी संसार को अपरिवर्तनीय तथा अटल नियमों से संचालित होता है ऐसा वह मानते हैं। सत्य ही हमारे जीवन का प्राणतत्व है। सत्य के बिना जीवन किसी सिद्धान्त या नियम का पालन कठिन है।

सत्य किसी भी परिस्थिति में हितकारी ही है जबकि असत्य बोलकर कुछ समय के लिए शांति प्राप्त कर सकते हैं, लेकिन एक झूठ के लिए अनेक झूठ बोलने पड़ते हैं और इससे हममें कितनी अशांति उत्पन्न होती है उसका अन्दाजा लगाना कठिन है। सत्य को केवल व्यक्ति के लिए ही आवश्यक नहीं मानते बल्कि वह समूह और समाज के लिए भी आवश्यक मानते हैं।

गांधी जी ने माना कि व्यक्ति ईश्वर को नकार सकता है लेकिन सत्य को नकारना संभव नहीं है। गांधी जी के अनुसार सत्य जंगलों या पहाड़ों पर मिलने वाली चीज नहीं है। यह तो संसार में रहते ही संभव है। यदि व्यक्ति दूसरे के दुःख दर्द में सहायक हो जाये तो सत्य के स्वयं ही दर्शन हो जायेंगे।

गांधी जी ने अहिंसा को साधन के रूप में स्वीकार किया। अहिंसा का साधारण अर्थ दूसरों को कष्ट न देना है। सत्य और अहिंसा ऐसे अस्त्र हैं। जिनके द्वारा संसार को झुकाया जा सकता है– विरोधी को अपने प्रति प्रेम–सद्भावना रखने के लिए मजबूर किया जा सकता है।

वर्तमान सन्दर्भ में अहिंसा की व्यावहारिकता पर लोगों का विश्वास नहीं रहा। आज देश में अलग प्रकार का वातावरण है। चारों ओर घमासान–सा नजर आता है। मानवीय मूल्य मृतप्राय हो गये हैं। आत्मविश्वासी सूर्य भी धूमिल हो गया है।

अतः यह कहा जा सकता है कि अहिंसा एवं सत्य के प्रति आस्था का उदय आध्यात्मिक एवं ईश्वरीय प्रेम से ही हो सकता है और गांधी जी इसी को ईश्वर मानते थे उनके लिए सत्य ही ईश्वर था जो एक अमूल्य खजाना था। यह ठीक है कि किसी व्यक्ति विशेष की आस्था गांधी की तरह ईश्वर में न हो किन्तु उनके अहिंसा के अस्त्र को नकारा नहीं जा सकता।

संदर्भ सूची

1. महात्मा गांधी, (1999); अहिंसा और सत्य, उत्तर प्रदेश, गांधी स्मारक निधि सेवा, पुरी, वाराणसी।
2. पोद्दार, हनुमान, (N.D.); महाभारत शांतिपर्व, अध्याय 162, श्लोक 8, गीता प्रेस, गोरखपुर
3. महात्मा गांधी, (1986); अहिंसा और सत्य, उत्तर प्रदेश, गांधी स्मारक निधि, सेवापुरी, वाराणसी
4. मनु, मनुस्मृति, अध्याय 4, श्लोक 256
5. कोचर, कन्हैण लाल, (1997); गांधी दर्शन, अनुपम प्रकाशन, जयपुर।
6. दिवाकर, रंगनाथ, (1990); लेख व्यावहारिक आध्यात्मक का दृष्टांत, गांधी, गांधीमार्ग, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, नई दिल्ली
7. महात्मा गांधी (1988); दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद
8. महात्मा गांधी (1926); यंग इण्डिया, मद्रास एण्ड गणेशन कम्पनी
9. धीरेन्द्र मोहन, (1983); महात्मा गांधी का दर्शन, बिहारी हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना
10. महात्मा गांधी (2000); आत्मकथा, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद
11. महात्मा गांधी, (1942), हरिजन सेवक, नवजीन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद